“आहड़”

Mandip Kumar Chaurasiya

Assistant professor(Guest)

Dept. Of A.I.H. & Archaeology

Patna University,Patna-800005

M.A. Semester-II

Paper/CC – (8) Concept and Technique of Archaeology,Pre and Proto History of Africa & Archaeology Sites

यह पुरातात्विक स्थल राजस्थान के उदयपुर में आहड़ नदी के किनारे स्थित है। इस पुरातात्विक स्थल की खुदाई सर्वप्रथम राजस्थान सरकार की ओर से पुरातत्व विभाग ने सन् 1954-56 ई० मे की। इसके बाद पुन: डेक्कन कॉलेज के स्नातकोत्तर अनुसंधान संस्थान, पुना विश्वविद्यालय, मेलवर्न विश्वविद्यालय तथा राजस्थान सरकार के पुरातत्व विभाग द्वारा सम्मिलित रूप से इसका उत्खनन किया गया। इस स्थल के मुख्य उत्खननकर्ता पुरातत्वविद एच० डी० संकलिया थे।

उत्खनन के फलस्वरूप वहाँ विकसित दो सांस्कृतिक कालों एवं उनकी तीन-तीन अवस्थाओ के अस्तित्व का पता चला। प्रथम काल से पन्द्रह निर्माण कालो के साक्ष्य का पता चला। इस काल की अपनी कुछ प्रमुख विशेषताए थी- इसमें चित्रित मृदभांड, ताम्र-मल और लोहे के प्रयोग का अभाव था। परन्तु दूसरे सांस्कृतिक काल में लोहे का प्रयोग, ब्राहमी लिपि के अभिलेख-युक्त पकी मिट्टी की मुहरें और उत्तरी कृष्ण-मार्जित मृदभाण्ड के प्रयोग मुख्य

रूप से उल्लेखनीय है। कार्बन-14 विधि के आधार पर प्रथम सांस्कृतिक काल के आरंभ की तिथि लगभग 2000 ई० पूं० निर्धारित की गई जो मृदभांण्ड के तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित थी। चित्रित कृष्ण लोहित मृदभांड की तिथि लगभग 1791-1762 ई०पूं० निर्धारित की गई।

आहड़ के प्रथम सांस्कृतिक काल के संपुर्ण काल में चाक पर बने मृदभंडो का प्रयोग हुआ है और इनके निर्माण में भिन्न-भिन्न तकनीक अपनाया गया। कुछ बर्तनो के गर्दन और उपरी हिस्से चाक पर तो शेष हाथ से अलग-अलग बनाये जाते थे। इस काल के प्रमुख मृदभांड में चित्रित कृष्ण लोहित, क्रीम लेपित पांडू रंग का मोटा कृष्ण-लोहित, धब्बेदार धूसर और लोहित नारंगी, कत्थई जैसा लेपित पात्र, लोहित घोल चढ़ाया हुआ रूक्ष, चमकीले धब्बेदार धुसर पात्र परम्परा आदि के साथ क्रीम और पांडू, लोहित घोल चढ़ाया और चित्रित कृष्ण-लोहित पात्र इस काल के प्रमुख प्रकार थे। चित्रित कृष्ण-लोहित तथा अन्य मृदभाण्डो मे महत्वपूर्ण बिना किनारे वाला खड़ा अथवा उत्तल भुजी कटोरा, छिछली कड़ाही और बेसिन प्रमुख बर्तन थे।

इस काल के दो आद्य अवस्थाओं में प्रचुरता से उपलब्ध लोहित-लेपित मृदभाण्ड के दो वर्ग थे- मोटा लोहित लेपित और पलता लोहित-लेपित। दोनो पात्र-परम्परा को खुब चमकाया गया था। टैन, कत्थई और नारंगी रंगो के लेप चढ़ाये जाते थे। एक असामान्य आकार का कलश मिला जिसे थाली स्तम्भ मे थाली के स्थान पर स्थापित करने से उसकी आकृति दोहरा कटोरा सदृश हो जाती है। जिसे उत्खननकर्ता ने इसकी तुलना ईरान और क्रीट में उपलब्ध इस प्रकार के बर्तनो से की है। रूक्ष सतह वाले बर्तन प्रचुर संख्या मे मिले, इनका उपयोग भोजन पकाने मे किया जाता होगा। चौडे, खोखले स्तम्भीय एवं आधार वाला एक ऐसा भी कटोरा मिला जिसकी समता तेपे हिस्सार में पाये गये सदृश पात्रो से की जाती है। इस काल के मृदभाण्ड़ो के अलंकरण मे पर्याप्त विविधता थी। अलंकरण के लिए चित्रण, उत्कीर्णन तथा काट विधियाँ अपनायी जाती थी।

इसमे दो प्रकार की चित्रकारी की जाती एक कृष्ण-लोहित मृदभाण्ड को हल्के स्वेत रंग से चित्रित किया जाता था तो दूसरा लोहित लेपित पात्रों को कृष्ण रंग से। पहले पात्र-पत्रकार की चित्रकारी में सर्पिल नमुने, तरंगित रेखाएँ, तिरछा समचतुर्भुज सदृश रेखाएँ और पताकाएँ सदृश रेखीय नमुने बनाये जाते थे।

आहड़ की संस्कृति-1 के पन्द्रह निर्माण काल के प्रमाण मिले। सभी अवस्थाओ की निर्माण विधि मे सामंजस्य था। परन्तु भवनो के निर्माण भिन्न-भिन्न होते थे। भवन निर्माण के लिए पत्थर, कच्ची ईट और मिट्टी का उपयोग किया जाता था। दिवारो के सुदृढ़ीकरण के लिए या तो बाँस के चिक अथवा स्फटिक कण मिश्रित मिट्टी का प्रयोग किया जाता था। यह विधि आज भी दक्षिण-पुर्व राजस्थान मे अपनायी जाती है। फ़र्श के लिए पीली चिकनी मिट्टी मिली काली मिट्टी का प्रयोग किया जाता था। मकानो का औसत माप 9.15×4.60 मीटर रहता था। बडे मकान १० मीटर लम्बे और छोटे 6.7×5.2 मी० तथा 3×2.7 मीटर के बनाये जाते थे। कुछ स्तंभ-गर्तो के मिलने से छप्पर बनाने मे बाँस या काष्ठकड़ियो के उपयोग का अनुमान लगाया जाता है। सामान्यत: भोजन बडे चूल्हो मे बनता था। वर्गाकार मंच पर बना दो बर्तन चढ़ाने वाला एक त्रि-अस्तरीय अलंकरण युक्त चूल्हा मिला। संभवत: इन चूल्हो का प्रयोग सामुहिक भोज के अवसर पर अथवा धातु गलाने मे इनका प्रयोग किया जाता होगा। पशुओ के अस्थियो के अवशेष मांसाहारी होने के साक्ष्य प्रस्तुत करते है और चक्की, मुसल, से अन्न पीसने का संकेत मिलता है।

यहाँ से चार सपाट ताम्र-परशु मिले। एक ताँबे का चादर भी मिला जिसे एक बर्तन मे रखकर मकान के फर्श मे गाड़ दिया गया था। आबादी के आद्य स्तर मे विशेष प्रकार के बने एक गोल गर्त मे ताम्रमल मिला। इस क्षेत्र मे ताँबा निकालने के साक्ष्य उपलब्ध होने से एच०डी० संकलिया ने अनुमान लगाया है कि आहड़ मे आबादी के आरंभ से ही ताँबा गलाने का काम होता था और यहाँ के लोगो के 2000 वर्षो तक आर्थिक जीवन का प्रमुख आधार बना

रहा। यहाँ उपलब्ध अन्य वस्तुओ मे पकी मिट्टी की ट्रिकोणी, गोलाकार या सुपारी के आकार की अडतीस तकुआ चक्रिया उल्लेखनीय है। पकी मिट्टी का बना भेड़ और सश्रृंग सांड़ इत्यादि आकृतियाँ मिली है।

द्वितीय सांस्कृतिक काल का 1.50 मी० से लेकर 1.80 मी० मोटा संचय मिला। इसके आरंभ की तिथि 500 ई०पू० निर्धारित होती है। लोहे का उपयोग, मृदभाण्ड परम्परा तथा वास्तुशिल्प की नवीनता का समावेश तथा लेखन कला का ज्ञान इस काल की प्रमुख विशेषता थी। इस काल की तीन अवस्थाएँ निर्धारित की गई। इस अवस्था से दुसरी शताब्दी ई०पू० और दुसरी शताब्दी ई० सन के बीच की ब्राह्मी लिपि मे अभिलिखित दो पक्की मिट्टी की मुँहरे इस काल के एक गर्त मे मिली। आहड़ के सबसे उपरी संचय दो अभ्रक-लेपित मध्यकालीन मृदभांड मिला।

<u>महत्वपूर्ण तथ्य:-</u>

- ⇨ आहड़ सभ्यता, उदयपुर मे आहड़ नदी के किनारे स्थित है।
- ⇨ आहड़ सभ्यता का समय - 2000 ई०पू० से 1200 ईसा पूर्व।
- ⇨ इस स्थल का उत्खनन रत्नचन्द्र अग्रवाल ने 1956 मे किया। इसके मुल उत्खनन कर्ता एच० डी० संकलिया थे।
- ⇨ यह मुलत: ग्रामीण सभ्यता थी। मुख्य व्यवसाय कृषि और पशुपालन थी।
- ⇨ यहाँ के लोग ताँबे के उपकरण भी बनाते थे।
- ⇨ यहाँ के मकान से चुँल्हे के प्रमाण मिले।